IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

दीनदयाल उपाध्याय के "दार्शनिक विचार- चिति व विराट" की वर्तमान संदर्भ में महत्ता

***डॉ. अनिल कुमार**

असिस्टेंट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग, श्री बजरंग पी. जी. कॉलेज, दादर आश्रम, सिकंदरपुर, बलिया, उत्तर प्रदेश

सारांश

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी अपने दार्शनिक विचारधारा के अंतर्गत 'चिति व विराट' को बहुत अधिक महत्व देते हैं। उनका मानना है कि किसी भी देश की आत्मा 'चिति' होती है और उस देश की प्राण शक्ति 'विराट' होता है। चिति और विराट से ही कोई देश मजबूत बनता है और विकास पथ पर अग्रसर होता है। दीनदयाल जी कहते हैं कि राष्ट्र के दो तत्व होते हैं। प्रथम चिति और द्वितीय विराट। चिति के द्वारा जागरूक होने वाली शक्ति को विराट कहते हैं। किसी भी राष्ट्र के अस्तित्व और गतिमान रहने के लिए चिति का होना बहुत जरूरी है। अगर चिति नष्ट हो जाए तो राष्ट्र नष्ट हो जाता है, क्योंकि राष्ट्र की आत्मा चिति होती है। जब तक चिति जीवित रहेगी, राष्ट्र का अस्तित्व बचा रहेगा। दीनदयाल जी का मानना है कि देश के मजबूती के लिए विराट का मजबूत होना बहुत जरूरी है। जितना मजबूत विराट होगा, उतनी मजबूत देश की संस्थाएं होगी। इस प्रकार देखा जाए तो किसी भी देश के अस्तित्व और मजबूती के लिए चिति और विराट का होना बहुत जरूरी है।

कुंजी शब्द- एकात्म मानववाद, दार्शनिक विचारधारा, राष्ट्र, चिति, विराट, अस्तित्व, मजबूत, संस्थान।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी अपने दार्शनिक विचारधारा 'एकात्म मानववाद' में चिति और विराट पर विस्तृत व्याख्यान दिए हैं। एकात्म मानववाद कोई नई विचारधारा नहीं है बल्कि जो हमारी सनातनी व्यवस्थाएं थी, सनातनी अर्थ- रचना थी, उसी का युगानुकूल रूप है।

दीनदयाल उपाध्याय जी अपने दर्शन के समक्ष मानवीय जीवन के बहुत चुनौतियों का सामना किए और जिसका वर्णन पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी अपने एक लेख में स्वयं करते हैं जो कि ऑर्गेनाइजर में प्रकाशित हुआ था। इसके संदर्भ में दत्तोपंत ठेंगड़ी जी लिखते हैं "उस लेख में पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने अनेक स्तरों पर मानवता को लगे रोगों का समाधान प्रस्तुत किए थे। वे एक द्रष्टा थे, और मानवता को लगे रोगों पर उन्होंने हमेशा उंगली उठाया। उन रोगों का उपचार करना इनका जीवन-कार्य था।"

दीनदयाल उपाध्याय जी ने अपने इस दर्शन के अंतर्गत अनेक दार्शनिक अवधारणाओं का वर्णन किये है जिनमें चिति और विराट का अपना एक अलग ही स्थान है जो इस प्रकार है।–

चिति-

भारत के प्राचीन ग्रंथों एवं शास्त्रों में 'चिति' का अर्थ 'राष्ट्र की आत्मा' बताया गया है। जिस प्रकार व्यक्ति का अपनी एक आत्मा होती है ,ठीक उसी प्रकार राष्ट्र की भी अपनी आत्मा होती है और इसी आत्मा के कारण सारा राष्ट्र एकात्म के धागे में बंधा रहता है।

हमारे देश के शास्त्रकारों ने इसी 'राष्ट्र की आत्मा' को 'चिति' कहा है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी भी भारतीय शास्त्रों के अनुसार 'चिति' का अर्थ 'राष्ट्र की आत्मा' को ही मानते हैं। अर्थात,

"एक शब्द में कहा जाए तो राष्ट्र की आत्मा को चिति कहते हैं।" पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी अपने दर्शन में जिस 'चिति' शब्द का प्रयोग किए हैं ,उसका आधार 'दैशिक शास्त्र' है।

दैशिक शास्त्र में 'राष्ट्र' को 'जाति' कहा गया है और जाति के दो प्रमुख तत्व होते हैं - पहला चिति और दूसरा विराट।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी चिति के विषय में लिखते हैं कि "चिति ही राष्ट्रीयता के चिह्न है और इसी चिति के कारण किसी भी राष्ट्र के संस्कृति को भिन्न-भिन्न व्यक्तित्व प्राप्त होता है। धर्म ,भाषा ,साहित्य व कला ए सभी इस 'चिति' की ही प्रस्तुतीकरण है। जिस प्रकार शरीर के सभी भाग आपस में आत्म तत्व के कारण एक दूसरे से जुड़े हैं ठीक उसी प्रकार भाषा ,धर्म ,संस्कृति , वेशभूषा व रहन सहन जैसी समस्त बातें राष्ट्रीय आत्म तत्वों के साथ जुड़ी रहती है। इस आत्म तत्व के कारण ही इन सभी का पोषण व विकास होता है। देश के भीतर पायी जाने वाली समाजिक एकता ,समष्टि जीवन का अनुभव राष्ट्र के इस आत्मा या चिति के कारण ही होता है। चिति के प्रकाश से ही राष्ट्र प्रकाशमान होता है। अगर किसी राष्ट्र की आत्मा अर्थात चिति का विनाश हो रहा है तो निश्चित ही राष्ट्र का पतन हो जाएगा। यदि भारत देश का उत्थान करना है तो हर हाल में चिति या आत्मा का स्वरूप - दर्शन देशवासियों को कराना होगा।"

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी संघ के विभिन्न शिक्षा वर्गों में चिति की व्याख्या अलग-अलग संदर्भ में किए हैं , वे कहते हैं ,"चिति परमसुख का साक्षात्कार है।"

राष्ट्र का चैतन्य है- चिति। अच्छे कार्यों से हम चिति का आत्मसाक्षात्कार या अनुभव करते हैं और यही अच्छे कार्य 'संस्कृति' है। 'संस्कृति' की उत्पत्ति मानव जगत के प्रयत्नों का परिणाम है परंतु 'चिति' ईश्वर के द्वारा प्राप्त होता है। 'चिति' का पोषक कार्य संस्कृति है , जिन समूहों के पास एक चिति अर्थात आत्मा होती है वह समाज बन जाता है और इसके अलग होने से समाज भी खंड खंड हो जाता है।

चिति की व्याख्या करते हुए पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी लिखते हैं ," हर राष्ट्र की अपनी एक विशेष प्रकृति होती है जो ऐतिहासिक कारणों का अथवा भौगोलिक कारणों का प्रभाव नही अपितु जन्मजात होती है ,इसे ही चिति कहते हैं। किसी भी राष्ट्र का उत्थान अथवा पतन उसकी आत्मा अर्थात चिति के अनुकूल या प्रतिकूल व्यवहार पर निर्भर करता है। चिति स्वयं को अभिव्यक्त करने तथा व्यक्तियों को पुरुषार्थ के सिद्धि हेतु अनेक संस्थाओं स्थापित करती है जैसे- जाति, वर्ण, संघ, पंचायत, विवाह, परिवार व राज्य इत्यादि।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी अपने दर्शन 'एकात्म मानववाद' में कहते हैं किसी भी समाज में चिति का प्रादुर्भाव जन्मजात होती है ,ऐतिहासिक कारणों से नही।

दत्तोपंत ठेंगड़ी जी चिति को 'राष्ट्रीय चित्त' मानते है और कहते है कि "प्रत्येक राष्ट्र का अपना अन्तःकरण एक चित्त होता है। धर्म को राष्ट्र के चित्त का संग्रहालय कहते है ,यदि धर्म को नष्ट कर दें तो राष्ट्र का भी नाश हो जायेगा।"

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी चित्त के विषय में लिखते हैं यह 'चिति' जनसमूह के प्रत्येक व्यक्ति में राष्ट्र के प्रति परमसुख की भावना के रूप में रहती है। यह श्रेष्ठ सुख , जिसके समक्ष अन्य सभी बातें ब्यर्थ लगता है ,यह 'चिति' द्वारा प्रतिष्ठित होता है। इसकी झलक व्यक्ति के प्रत्येक कार्य में दिखाई देती है और उसके समस्त चेष्टाएं व कर्म इसी 'चिति' के प्रकाश से चैतन्य रहते हैं। जब तक 'चिति' जागृत है तब तक राष्ट्र का उदय

होता है। इसी चेतना के आधार पर राष्ट्र संगठित रहता है। 'चिति' से जागृत हुई समष्टि की प्राकृतिक शक्ति को अर्थात अशुभ व अनिष्टों से रक्षा करने वाली शक्ति को 'विराट' कहते है।

डॉ मुरली मनोहर जोशी जी लिखते हैं समाज के निर्माण के संबंध में पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी द्वारा दी गई 'चिति' की अवधारणा अपने आप में एक श्रेष्ठ विचार है। जैसे व्यक्ति की आत्मा होती है वैसे ही समाज की भी एक आत्मा होती है। किसी भी समाज को स्वस्थ और गतिमान उसका 'चिति' ही बनाता है। समाज को अच्छे प्रकार से संचालित 'चिति' ही करती हैं और समाज के कमियों को नियंत्रित भी करती है। 'चिति' के आभाव में समाज का अस्तित्व नही रह जाता है। भारत देश में बिना आत्मा के व्यक्ति की कल्पना करना कठिन है तो हम समाज की कल्पना कैसे कर सकते हैं?

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का विश्लेषण था यदि हम समाज में 'चिति' और उसके 'चेतन भाव' को नहीं बनाए रखें तो समाज अपनी समस्त मूल प्रकृति को खो बैठता है अर्थात समाज के अस्तित्व के लिए 'चिति' का होना बहुत जरूरी है।

वस्तुतः 'चिति' वह मापक है जिससे हम किसी वस्तु को स्वीकार अथवा अस्वीकार करते हैं। 'चिति' किसी राष्ट्र की आत्मा होती है और इसी के आधार पर राष्ट्र खड़ा होता है, आगे बढ़ता है और अपना अस्तित्व बनाये रखता है।

विराट-

दीनदयाल उपाध्याय जी का मानना है कि जिस प्रकार 'चिति' राष्ट्र की आत्मा होती है ,उसी प्रकार राष्ट्र की प्राण शक्ति 'विराट' होती है। राष्ट्र को जाग्रत रखने वाली यह शक्ति हमारे संपूर्ण शरीर में संचार करती है और जोड़ती है। जितना हमारा 'विराट' जागरूक रहेगा उतना ही लोकतंत्र सफल रहेगा। यह चेतना ही राष्ट्र जीवन का संपूर्ण विकास करती है।

'चिति' के द्वारा जागरूक होने वाली शक्ति को ही 'विराट' कहा जाता है।

दैशिक शास्त्र के अनुसार राष्ट्र का पहला तत्व 'चिति' होता है और दूसरा 'विराट'। परंतु पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने जो 'विराट' शब्द लिया है वह मूल रूप से वैदिक साहित्य से है। 'विराट' राज्य व समाज व्यवस्था का प्रतीक है। वैदिक साहित्य में विराट शब्द सामाजिक व्यवस्था के बनाये रखने के सन्दर्भ में प्रयोग किया गया है।

दीनदयाल उपाध्याय जी वैदिक साहित्य से ही विराट को ग्रहण करते हैं और उसे युगानुकूल रूप देने का प्रयास करते हुए इसका वर्णन इस प्रकार करते हैं -"जैसे राष्ट्र का अवलंब चिति होती है वैसे ही जिस शक्ति से राष्ट्र की धारणा होती है उसे विराट कहते हैं। विराट राष्ट्र की वह कर्म शक्ति है जो चिति से जागृत और संगठित होती है। विराट का राष्ट्र जीवन में वही स्थान है जो शरीर में प्राण शक्ति का। प्राण से ही सभी इंद्रियों को शक्ति मिलती है ,बुद्धि को चैतन्य मिलता है और आत्मा शरीस्थ रहती है। राष्ट्र में भी विराट के सबल होने पर उसके भिन्न भिन्न अवयव अर्थात संस्थाएं सक्षम और समर्थ होती है। विराट के आधार पर ही लोकतंत्र सफल होता है और बलशाली बनता है। इस अवस्था में राष्ट्र की विविधता उसकी एकता के लिए बाधक नहीं होती। भाषा, व्यवसाय ,जाति व वेशभूषा आदि के भेद तो सभी स्थानों पर होते हैं, किंतु जहां विराट जाग्रत रहता है वहां संघर्ष नहीं होता है।"

दीनदयाल उपाध्याय जी कहते हैं कि हमें अपने राष्ट्र के विराट को जाग्रत रखना चाहिए। जब विराट जागा हुआ रहता है तो विभिन्नता व पारस्परिक संघर्ष जैसी बुराइयां उत्पन्न नहीं होती है और राष्ट्र के सभी लोग एक दूसरे के साथ सहयोग करते हैं तथा साथ में मिलजुल कर रहते हैं जैसे मानव शरीर के विभिन्न अंग एक दूसरे के साथ मिलकर रहते हैं और सहयोग करते हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी मानते हैं कि जैसे प्राणायाम करने से व्यक्ति का शरीर मजबूत बनता है वैसे ही लोक संस्कार, लोक संग्रह और लोक चेतना के द्वारा राष्ट्र का विराट मजबूत होता है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का यह सोच था कि जो हमारी युवा पीढ़ी है ,नई पीढ़ी है ,वह राष्ट्र जीवन का पुनर्निर्माण ,पाश्चात्य प्रभाव में आए बिना अपनी इन पुरातन अवधारणाओं 'चिति' एवं 'विराट' के माध्यम से करें।

निष्कर्ष-

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जाय तो किसी भी समाज और राष्ट्र के अस्तित्व के लिए, उसके गतिमान के लिए 'चिति' का होना बहुत जरूरी है। वही राष्ट्र और सभ्यता जीवित रहती है जहाँ 'चिति' जीवित रहती है। 'चिति' अर्थात 'राष्ट्र की आत्मा' का नष्ट होना ,उस राष्ट्र और सभ्यता के नष्ट होने का प्रतीक है। इसलिए बहुत जरूरी है कि हम अपने देश ,संस्कृति और सभ्यता को बचाये रखने के लिए हर हाल में 'चिति' को बचाये रखे। साथ ही हमे राष्ट्र की शक्ति अर्थात 'विराट' को मजबूत बनाना भी होगा, तभी हमारा देश मजबूत होगा। वर्तमान सन्दर्भ में देखा जाय तो लोकतंत्र के लिए विराट का प्रबल होना बहुत जरूरी है क्योंकि जितना मजबूत विराट होगा उतना ही मजबूत देश की संस्थाएं जैसे चुनाव आयोग ,विधान सभा ,संसद व पंचायत मजबूत होगा और बिना मजबूत हुए ये संस्थाएं निष्पक्ष रूप से अपना कार्य नही कर सकती है और लोकतंत्र की मजबूती व सफलता के लिए इन संस्थाओं का मजबूत होना ,देश व मानव हित में है। साथ ही जिस तरह आज पूरे विश्व में आतंकवाद का खतरा बढ़ रहा है, एक दूसरे देश से युद्ध हो रहा है, ऐसे में देश की प्राण शक्ति अर्थात विराट का मजबूत होना और जरूरी हो जाता है।

इस प्रकार वर्तमान में पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी के दर्शन- चिति व विराट की महत्ता बढ़ जाती है।

संदर्भ-

1. उपाध्याय, दीनदयाल. एकात्म मानववाद. नई दिल्ली: भारतीय जनसंघ कार्यालय.

2. उपाध्याय, दीनदयाल (1960). राष्ट्रजीवन की समस्याएं. लखनऊ: राष्ट्रधर्म प्रकाशन.

3. उपाध्याय, दीनदयाल (1972). राष्ट्रचिंतन. लखनऊ: राष्ट्रधर्म प्रकाशन.

4. उपाध्याय, दीनदयाल (1979). राष्ट्रजीवन की दिशा. लखनऊ: लोकहित प्रकाशन.

5. उपाध्याय, दीनदयाल (1989). हिन्दू संस्कृति की विशेषता. गाज़ियाबाद: जागृति प्रकाशन.

6. ठेंगड़ी, दत्तोपंत (1991). पंडित दीनदयाल उपाध्याय: व्यक्ति दर्शन खंड- 1: तत्व जिज्ञासा. नई दिल्ली: सुरुचि प्रकाशन.

7. गुप्त, बजरंग लाल (2019). राष्ट्र दृष्टि. प्रयागराज: संपादक- डॉ. चन्द्र प्रकाश सिंह, अरुंधति वशिष्ठ अनुसंधान पीठ.

8. गुप्त, बजरंग लाल (2017). भारतीय अस्मिता की निरंतरता. प्रयागराज: संपादक- डॉ. चन्द्र प्रकाश सिंह, अरुंधति वशिष्ठ अनुसंधान पीठ.

9. पाठक, विनोद चंद्र (2009). पंडित दीनदयाल उपाध्याय का राजनीतिक चिन्तन. नई दिल्ली: प्रकाशक- आर. डी. पाण्डेय, सत्यम पब्लिशिंग हाऊस.

10. गुप्त, बजरंग लाल (2010). एकात्म दृष्टि- भारत का भविष्य. प्रयागराज: संपादक- डॉ. चन्द्र प्रकाश सिंह, अरुंधति वशिष्ठ अनुसंधान पीठ.

11. शर्मा, महेश चंद्र (1994). दीनदयाल उपाध्याय कर्तव्य एवं विचार. नई दिल्ली: वसुधा पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड.

12. जोशी, मुरली मनोहर (1991). दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और विचार. उत्तर प्रदेश संदेश, अंक- 9.

13. गोपाल, कृष्ण (2019). राष्ट्र का राजनीतिक प्रबोधन और एकात्म मानव दर्शन. पंडित दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और व्यक्तित्व खण्ड - 1, प्रयागराज: संपादक- डॉ. जितेंद्र कुमार संजय और डॉ. इंद्र कुमार ठाकुर, साहित्य भंडार.

14. नेने, विनायक वासुदेव (1986). पंडित दीनदयाल उपाध्याय: विचार दर्शन खंड- 2 एकात्म मानव दर्शन. नई दिल्ली: सुरुचि प्रकाशन.